IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

सृष्टि के न्यायाधीश देवता : वरुण

राहुल
शोध-छात्र
संस्कृत, पालि एवं प्राकृत विभाग
महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक(हरि.)

देवता शब्द की निष्पत्ति और अर्थः-

दिवादि गण के अंतर्गत परस्मैपदी ष्दिवुष धातु से श्अच्श प्रत्यय करने पर श्देवश शब्द निष्पन्न होता है। पाणिनीय धातु-पाठ में दिवु धातु के दस अर्थों का परिगणन किया गया है। जिनके अनुसार देव शब्द का अर्थ होता है- ष*दीव्यति, व्यवहरति, द्योतते, मोदते वा इति देवः*ष। व्यवहार से सत्ता, द्युति से प्रकाश एवं मोद से आनंद सूचित होता है। देव शब्द से स्वार्थ में *"देवात् तल्*श्श [1] सूत्र से श्तल्श प्रत्यय करने पर देवता शब्द सिद्ध होता हैए निरूक्तकार आचार्य यास्क ने श्देवश शब्द का निर्वचन इस प्रकार किया है-

श्श्देवो दानाद्वा, दीपनाद्वा, द्योतनाद्वा, द्युस्थानो भवति वा यो देवः सा देवता इति।"[2]

अर्थात् दाता, वर प्रदाता, एवं द्योतमान अर्थात् तेजः पुंज गुण और जो द्युस्थानीय है उसे देव कहते हैं। महर्षि दयानंद सरस्वती ने देवता के विषय में कहा है कि जो ष*स्वयंप्रकाश स्वरूपए सबका प्रकाशक प्रशंसा के योग्यए आप आनंद स्वरूप तथा दूसरों को आनंद देने हारा है वह देव है।*श्श[3] इस प्रकार हम कह सकते हैं कि जो दिव्य गुणों से संपन्न और अलौकिक शक्ति से युक्त है वही देवता है।

वरूण देवताः-

वरुण देवता को द्युस्थानीय देवता बताया जाता है। वरूण के विषय में कहा जाता है कि ये इन्द्र को छोड़कर अन्य सब देवताओं में महान् हैं। इनके लिए कहे गए कुल सूक्तों की सख्या से इनका महत्व आंकना नितांत ही असंगत है। क्योंकि इनका गुणगान लगभग 12 सूक्तों में ही हुआ है। महत्ता की दृष्टि से वरुण का अपना विशेष स्थान है। वरुण का व्यक्तित्व मानवीय रूप में शारीरिक पक्ष की अपेक्षा नैतिक पक्ष में अधिक विकसित हुआ है।

महर्षि दयानंद सरस्वती का मत है कि ईश्वर एक है, उस एक के ईश्वर गुण, कर्म एवं स्वभाव के आधार पर असंख्य नाम हैं। इसी श्रंखला में उन्होंने अपने ग्रंथ सत्यार्थप्रकाश में ईश्वर के 100 नामों की व्याख्या की है। उन्होंने वरुण के विषय में कहा है कि *"यः शिष्टैर्मुमुक्षुभिधर्मात्मभिर्व्रियते वय्र्यते वा स वरूणः परमेश्वरः"* अर्थात् जो शिष्ट मुमुक्षुए मुक्त तथा धर्मात्माओं के द्वारा ग्रहण किया जाता है वह वरुण परमेश्वर है।[4] उन्होंने वरुण को एक स्वतंत्र देव न मानकर ईश्वर का ही एक नाम माना है।

वरूण का स्वरूपः-

ऋग्वदे, यजुर्वेद तथा सामवेद में वरुण का वर्णन अत्यन्त विस्तार से मिलता है। वरुण को विश्व का सम्राट् बताया गया है। इनको सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान् तथा सर्वव्यापक बताया गया है। इनको ऋत् का अधिष्ठाता तथा न्याय का देवता बताया है। वरुण को चुँकि विश्व का सम्राट् बताया गया है तो सम्राट् का कार्य प्रजाजनों के साथ प्रीति-पूर्वक व्यवहार करना और धर्म और न्याय-पूर्वक राज्य करना है। सृष्टि के समस्त प्राणि वरुण अर्थात् ईश्वर की प्रजा हैं। वो अपने सब प्रजाजनों के साथ धर्म-पूर्वक व्यवहार करते हैं इसी कारण उनको धर्मपति भी कहा जाता है। वरूण जल में अधिष्ठित होकर साम्राज्य का सचांलन करते हैं। समस्त पृथिवी व द्युलोक उनके शासन के अधीन हैं। समुद्र उनकी काक्षी अर्थात् कांख में ही है। ईश्वर ब्रह्माण्ड में सर्वत्र व्याप्त हैं कोई भी स्थान उनसे रहित नहीं है, समुद्र भी इसी ब्रह्माण्ड का एक हिस्सा है तो वहाँ भी वे विराजमान हैं ।

क. *उतयें भूमिर्वरूणस्य राज्ञ उतासौ द्यौर्बृहाती दूरेअन्ता।।*[5]

ख. *निषसाद धृतव्रतो वरुणः परत्याउस्वा। साम्राज्याय सुक्रतुः।।*[6]

ग. *सविता त्वा सवानां सुवतामग्निगृहपतिनां सोमो वनस्पतीनाम्।*

बृहस्पति वाचऽइन्द्रो ज्यैष्ठ्याय रूदः पशुभ्यो मित्रः सत्यो वरूणो धर्मपतीनाम्।।[7]

घ. *त्वं विश्वस्य मेधिर दिवश्चग्मश्च राजसि। स यामनि प्रति श्रुधि।।*[8]

पहले भी कहा जा चुका है कि वरुण जल में बैठकर अपना साम्राज्य चलाते हैं। जहाँ-2 भी ससांर में जल है वहाँ-2 ही वरुण का साम्राज्य है। संसार में 70 प्रतिशत भाग जल से परिपूर्ण है। जल वरुण के दूत का कार्य करता है। जल के द्वारा ससांर की समस्त सूचनाएँ वरुण के पास पहुंचती हैं। इसी कारण कहा कहते हैं कि वरुण के दूत सर्वत्र फैले हैं। वरुण को दूरदृष्टि से युक्त एवं सहस्रों नेत्रों से संपन्न बताया गया है। यहाँ सहस्रों नेत्रों से युक्त का अर्थ ये हो सकता है कि उनके दूत जिनकी संख्या असंख्य है वो समस्त संसार में फैले हुए हैं। संसार में होने वाली सब घटनाओं से वो उनको अवगत करवाते रहते हैं। प्राणियों के द्वारा किए जाने वाले सभी शुभ-अशुभ कर्मों की सारी जानकारी दूतों के माध्यम से वरुण देवता तक पहुँच जाती है। इस प्रकार दूत उनके नेत्र का कार्य करते हैं। इस आधार पर वरुण को सहस्रों नेत्रों से युक्त बताया गया है।

निषसाद धृतव्रतो वरुणः पस्त्यास्वा।

साम्राज्याय सुक्रतुः।।[9]

ससांर के समस्त शाश्वत नियमों को ऋत् कहा जाता है। ऋत् वैदिक धर्म में सही सनातन प्राकृतिक व्यवस्था और संतुलन के सिद्धांत को कहते हैंए यानि वह तत्व जो पूरे संसार और ब्रह्माण्ड को धार्मिक स्थिति में रखे या लाए। वैदिक संस्कृत में इसका अर्थ श्ठीक से जुड़ा हुआए सत्यए सही या सुव्यवस्थितश होता है। वरुण देवता को न्याय का अधिष्ठाताए धर्म का रक्षक तथा ऋत् का पालक बताया गया हैं। वैदिक साहित्य में श्ऋत्श शब्द का प्रयोग सृष्टि के सर्वमान्य नियम के लिए हुआ है। संसार के सभी पदार्थ परिवर्तनशील हैं किंतु परिवर्तन का नियम अपरिवर्तनीय नियम के कारण सूर्य-चंद्र गतिशील हैं। संसार में जो कुछ भी है वह सब ऋत् के नियम से बँधा हुआ है। ऋत् को सबका मूल कारण माना गया है। ऋग्वेद

में वरुण को सम्राट् व ऋतावत् अर्थात् ऋत् का रक्षक कहा गया है। कहा जाता है कि वरूण के ऋत् का प्रवाह समस्त संसार में फैला है। वरूण के नियम अकाट्य हैं उनको कोई भी काट नहीं सकता।

क. *अपो सु म्यक्ष वरुण भियसं मत्सम्राळृतावोऽनु मागृभाय।*

दामेव वत्साद्वि मुमुग्ध्यंहो नहि त्वदारे निमिषष्यनेषे।।[10]

ख. *प्र सीमादित्यो असृद्विधर्त्ता ऋतं सिन्धवो वरुणस्य यन्ति।*

न श्राम्यन्ति न वि मुचन्त्येते वयो न पप्तू रघुया परिज्मन्।।[11]

ग. *नमः पुरा ते वरुणोत नूनमुतापरं तुविजात ब्रवाम।*

त्वेहि कं पर्वते न श्रितान्य प्रच्युतानि दूळभ व्रतानि।।[12]

यजुर्वेद व अथर्ववेद में वरुण के पाशों का विशेष वर्णन मिलता है। वरुण राजा हैं उनके दूत ससांर की समस्त सूचनाएँ इकट्ठा करते हैं। उनके ही अनुसार अपराधी को दण्ड़ दिया जाता है वरुण के पाश तीन प्रकार के बताए हैं- उत्तमए मध्यम व अधम। इनको हम साधारणतया यह भी कह सकते है- साधारणए कठोर व कठोरतम्। साधारण या उत्तम पाश छोटे पापियों के लिए होते हैं। इनको सामान्य दण्ड़ दिया जाता है। माध्यम पाश बड़े पापों के लिएए इनको कठोर दण्ड दिया जाता है। अधम पाश या कठोरतम दण्ड-जघन्य पापों के लिए है। ये अत्यन्त कठोर दण्ड़ के भागी हैं। यानि की जो जैसा कर्म करता है उसको वैसा ही फल मिलता है। इनकी सत्ता में किसी के भी साथ अन्याय नहीं होता। सभी को कर्मानुसार उचित फल मिलता है। ईश्वर का एक गुण न्यायकारी उपरोक्त बातों को देखने पर बिल्कुल उचित प्रतीत होता है।

उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं वि मध्यमँ श्रथाय।

अथा वयमादित्य व्रते तवानागसो अदित्ये स्याम।।[13]

वरुण के कार्यः-

वेदों में वरुण के कार्यों का विशेष रूप से वर्णन प्राप्त होता है। अथर्ववेद में वरुण के दूतों का वर्णन मिलता है। वहाँ वर्णित है कि संसार की समस्त सचूनाएँ वरुण के पास रहती हैं। वरुण के दूत समस्त संसार में फैले है। वे छोटी-से-छोटी व बड़ी-से-बडी़ घटना को प्रत्यक्षद्रर्शी के तुल्य देखते हैं। पृथिवी से द्युलोक पर्यन्त कोई भी पाप-पुण्य इनसे छुपा नहीं है। वरुण के पास प्रत्येक व्यक्ति की चेष्टाओं का लेखा-जोखा है। वे उसी के अनुसार दण्ड देते हैं। वरुण को कोई भी प्राणि धोखा नहीं दे सकता। उनके दण्ड़ से कोई भी नहीं बच सकता। अथर्ववेद में तो यहाँ तक वर्णन मिलता है कि मनुष्य के पलक झपकने तक का लेखा-जोखा वरुण के पास है। इससे यह सिद्ध होता है कि प्राणियों विशेष रूप से मनुष्यों द्वारा शरीर से की जाने वाली समस्त चेष्टाएँ व क्रियाएँ वरुण की निगरानी में हैं। और इसी आधार पर वो अपना न्याय कार्य करते हैं।

क. बृहन्नेषांमधिष्ठाता अन्तिकादिव पश्यति।

यस्तायन्मन्यते चरन्त्सर्वं देवा इदं विदुः।।[14]

ख. यस्तिष्ठति चरति यश्च वंचति यो निलायं चरति यः प्रतङ्कम्।

द्वौ सन्निषद्य यन्मन्त्रयेते राजा तद् वेद वरूणस्तृतीय।।[15]

ग. सर्वं तद्राजा वरुणों वि चष्टे यदन्तरा रोदसी यत् परस्तात्।

सख्यांता अस्य निमिषो जनानाम् अक्षानिव श्वघ्नी निमिनोति तानि।।[16]

अथर्ववेद में वरुण के पाशों की संख्या के विषय में भी वर्णन मिलता है। वहाँ उल्लिखित है कि वरुण के पाश सात प्रकार के हैंए ये पुनः तीन-2 प्रकार के हो जाते हैंए अतः इनकी संख्या 21 हो जाती है।

ये तो पाशा वरुण सप्तसप्त त्रेधा तिष्ठन्ति विशिता रूषन्तः।

छिनन्तु सर्वे अनृतं वदन्तं यः सत्यवाद्यति तं सृजन्तु।।[17]

यजुर्वेद में कहा है कि वरुण ने द्युलोकए पृथिवी लोक व अंतरिक्ष लोक को धारण किया हुआ है। वरुण को ससांर का सम्राट् व स्वामी बताया गया है। द्युलोक व पृथिवी लोक के मध्य अंतरिक्ष का विशाल प्रांगण बनाना वरुण का कार्य है। मनुष्य के हृदय में संकल्प शक्ति प्रदान करनाए मानव-मात्र को ऊर्जा व स्फूर्ति देना वरुण के ही कार्य हैं। वरुण देवता एक तरफ जहाँ मनुष्य को नवीन संकल्प करने की शक्ति प्रदान करते हैं, वहीं दूसरी तरफ उस संकल्प को पूर्ण करने के लिए उचित ऊर्जा व स्फूर्ति भी देते हैं। यानि कि हम कह सकते हैं कि वरुण मनुष्य की संकल्प-पूर्ति का मार्ग प्रशस्त करते हैं। निराधार आकाश में सूर्य के लिए मार्ग निर्माण करना वरुण का कार्य ही बताया गया है।

क. आदित्यास्त्वगस्यदित्यै सदऽआसीद।

अस्तभ्नाद् द्यां वृषभोऽअन्तरिक्षममिमीत वरिमाणम्पृथिव्याः।

आसीदद्विष्वा भुवनानि सम्राड् विष्वत्रोनि वरुणस्य व्रतानि।।[18]

ख. वनेषु व्यन्तरिक्षं ततान् वाजमर्वत्सु पयऽउस्रियासु।

हत्सु क्रतुं वरूणो विक्ष्वग्निं दिवि सर्यूमदधात् सोममद्रौ।।[19]

ग. उरूं हि राजा वरुणश्चकार सूर्याय पन्चामन्वेतवा उ।

अपदे पादा प्रतिधातवेकरूता पवक्ता हृदयाविधाष्चित्।।[20]

ऋग्वेद में वर्णन मिलता है कि मित्र व वरुण सूर्य किरणों के साथ चलते हैं। सूर्य किरणों को पृथिवी लोक तक पहुंचाने का कार्य मित्र-वरुण का ही बताया है।

वर्षिष्ठक्षत्रा उरूचक्षसा नरा राजाना दीर्घश्रुत्तमा।

ता बहुता न दंसना रयर्यतः साकं सूर्यस्य रश्मिभिः।।[21]

उपसंहारः-

जैसा कि हम जानते ईश्वर के गुण, कर्म एवं स्वभाव के आधार अनेकों नाम हैं। वरुण भी उन नामों में एक है। ईश्वर के विषय में कहा जाता है कि वो सर्वव्यापक, सर्वज्ञ और न्यायकरी है। वरुण देवता के निमित्त कहे गए वैदिक मंत्रों में इन समस्त गुणों का वर्णन हमें प्राप्त होता है। ये सब प्राणियों को कर्मानुसार यथायोग्य फल देते हैं किसी के भी साथ भेदभाव नहीं होता। इनके दूत सूक्ष्म रूप में संसार विद्यमान हैं, प्राणियों द्वारा किए जाने वाले सब कामों की बडी सूक्ष्मता से निगरानी करते हैं। ये दूत वरुण के नेत्र का कार्य करते हैं। वरुण देवता मनुष्य के हृदय में नवीन संकल्प उत्पन्न करने के साथ-साथ उसको पूरा करने के लिए ऊर्जा और स्फूर्ति भी प्रदान करत् हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि वरुण एक अत्यन्त महत्वशाली देवता हैंए जो जीव के समस्त कर्मों का लेखा-जोख अपने पास रखते हैं तथा सभी को न्यायपर्वूक कर्मों का उचित फल या दण्ड देते हैं।

संदर्भ सूचीः-

1. अष्टाध्यायी 05.04.27
2. निरुक्त 07.15
3. सत्यार्थ प्रकाश प्रथम समुल्लास पृष्ठ संख्या. 24
4. सत्यार्थ प्रकाश, प्रथम समुल्लास पृष्ठ संख्या. 22
5. अथर्ववेद, 04.16.03
6. ऋग्वेद, 01.25.10
7. यजुर्वेद, 09.39
8. ऋग्वेद, 01.25.20
9. यजुर्वेद, 10.27
10. ऋग्वेद, 02.28.06
11. ऋग्वेद, 02.28.04
12. ऋग्वेद, 02.28.08
13. यजुर्वेद, 12.12
14. अथर्ववेद, 04.16.01
15. अथर्ववेद, 04.16.03
16. अथर्ववेद, 04.16.05
17. अथर्ववेद, 04.16.06
18. यजुर्वेद, 04.30
19. यजुर्वेद,04.31
20. ऋग्वेद, 01.24.08
21. ऋग्वेद, 08.101.02